

# संस्कृत साहित्य में योग: एक दार्शनिक अध्ययन

**डॉ. कीर्ति कुमार त्रिपाठी<sup>1</sup>, कमलाकर सिंह<sup>2</sup>**

निर्देशक-सहायक प्राध्यापक-संस्कृत, यमुना प्रसाद शास्त्री, महाविद्यालय, सिरमौर (म.प्र.)<sup>1</sup>

शोधार्थी-शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)<sup>2</sup>

## सारांश:

सभी दार्शनिक परंपराओं और धार्मिक संप्रदायों ने आत्म-साक्षात्कार के लिए योगाभ्यास को अनिवार्य माना गया है। वेदों तथा अन्य धार्मिक परंपराओं ने भी योग की उपयोगिता को स्वीकार किया है। योग शब्द का प्रायः अर्थ संयोग या मिलन बताया जाता है। यह इस तथ्य का द्योतक है कि व्यक्ति और ब्रह्मांड एक ही हैं, जैसे वे सार्वभौमिक स्तर पर एक हैं। योग शब्द संस्कृत धातु युज् से बना है, जिसका अर्थ है जोड़ना या एक करना। यह भी कहा जा सकता है कि योग पुनर्मिलन है। उपनिषदों में कहा गया है, जो एक था, वही अनेक हो गया। योग एक व्यापक शब्द है, और पतंजलि के सूत्र राजयोग का मुख्य ग्रंथ हैं। योग केवल ध्यान या प्राणायाम तक सीमित नहीं है; यह प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में उपयोगी है। महर्षि पतंजलि ने मनोवैज्ञानिक, वैज्ञानिक और शैक्षिक दृष्टिकोण से योगसूत्रों को विस्तार देने का प्रयास किया, और ऋषि वशिष्ठ ने योग वशिष्ठ की रचना की।

आज मनुष्य यह मानता है कि वैज्ञानिक उन्नति ही जीवन का सबसे बड़ा लक्ष्य है, लेकिन दर्शन और आध्यात्मिकता भी महत्वपूर्ण हैं। जीवन के उचित विकास के लिए इन दोनों के बीच सामंजस्य आवश्यक है। यह शोध इस भ्रांति को दूर करने का प्रयास करता है और स्पष्ट करता है कि प्राचीन भारतीय योग दर्शन मानसिक शांति और सकारात्मक विकास प्रदान कर सकता है। बदलते हुए समाज में यह समझना आवश्यक है कि वर्तमान शिक्षा के मूल्यों में परिवर्तन लाने के लिए योग दर्शन की शिक्षाओं को अपनाया जाना चाहिए। वैदिक काल के प्रारंभ में ऋग्वेद की रचना प्राचीन ऋषियों द्वारा की गई, जिन्होंने अपनी साधना-पद्धतियों, तप या योग के माध्यम से सत्य का साक्षात्कार किया था। उन्हें अतिन्द्रिय ज्ञान की दृष्टि प्राप्त थी, और इसी अनुभूति के द्वारा उन्होंने इस लोक तथा परलोक के जीवन के स्वरूप को समझा।

**शोध प्रविधि:** इस शोध पत्र में प्राथमिक एवं द्वितीय शोध सामाग्री के आधार पर अध्ययन किया गया है। प्राथमिक स्रोतों के रूप में साक्षात्कार, विद्वानों का मार्गदर्शन एवं द्वितीयक स्रोत के रूप में पुस्तकें, पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से अध्ययन किया गया है।

## समस्या

यद्यपि मनुष्य ने विज्ञान और प्रौद्योगिकी में बहुत प्रगति की है, फिर भी विचारों और कार्यों में गिरावट आई है। यह संपूर्ण मानवता के लिए खतरा उत्पन्न कर सकता है। इसलिए, आज की शिक्षा में प्राचीन भारतीय योग दर्शन के आदर्शों का व्यावहारिक अनुप्रयोग और भी अधिक महत्वपूर्ण हो गया है। इसका उद्देश्य मनुष्य को शिक्षा के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान प्रदान करना और उसके व्यक्तित्व का विकास करना है। प्राचीन भारतीय योग दर्शन को अपनाने से मानसिक अशांति को दूर किया जा सकता है और व्यक्ति का समग्र विकास संभव है।

## उद्देश्य

- योग दर्शन का ऐतिहासिक अध्ययन करना।
- संस्कृत वैदिक साहित्य में योग के तत्वों का अध्ययन करना।
- पुराणों और महाभारत तथा कालिदास की रचनाओं में योग के तत्वों का अध्ययन करना।
- पतंजलि के योग सूत्र का अध्ययन करना।
- योग और उसके आधुनिक अनुप्रयोगों का अध्ययन करना।
- वर्तमान नैतिक और आध्यात्मिक जीवन को सुधारने में योग की भूमिका का अध्ययन करना।

**समस्या**

वेद और उपनिषद योग के सिद्धांतों और विधियों के भंडार हैं। ऋग्वेद, सामवेद, शुक्ल यजुर्वेद, शतपथ ब्राह्मण, तैत्तिरीय ब्राह्मण, श्वेताश्वतर उपनिषद आदि में अनेक ऐसे तत्व मिलते हैं जहाँ योग का दर्शन विभिन्न स्थानों पर बिखरा हुआ है। श्वेताश्वतर उपनिषद में हमें नित्यों में वही नित्य है; चेतन प्राणियों में वही परम चेतन है। वह एक ही अनेक लोगों की इच्छाओं को पूर्ण करने वाला है।<sup>1</sup> उस कारण का साक्षात्कार सांख्य और योग के द्वारा किया जाता है। उस दिव्य सत्ता को जानकर मनुष्य सभी बंधनों से मुक्त हो जाता है।<sup>2</sup> भारतीय विचारकों, ऋषियों और तपस्वियों ने मानव जीवन की वास्तविकता को समझने के लिए सबसे पहले व्यक्तित्व विकास को समझने का प्रयास किया। व्यक्तित्व व्यक्ति की पहचान है और जीवन का संपूर्ण स्वरूप व्यक्तित्व के माध्यम से प्रकट होता है। भारत के प्राचीन ऋषियों ने मन की शुद्धि के लिए विधियों और प्रक्रियाओं का वर्णन किया है, जो दार्शनिक सिद्धांतों पर आधारित हैं। इस अनुशासन को योग दर्शन कहा जाता है और यह भारतीय दार्शनिक चिंतन की एक अमूल्य धरोहर है, जिसे सभी परंपराओं ने किसी न किसी रूप में स्वीकार किया है। समाजशास्त्र, नैतिकता और अर्थशास्त्र जैसे विषयों को भी इसमें शामिल किया गया है। इन विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए इस विषय का चयन किया है।<sup>3</sup>

यद्यपि मनुष्य ने विज्ञान और प्रौद्योगिकी में बहुत प्रगति की है, फिर भी विचारों और कार्यों में गिरावट आई है। यह संपूर्ण मानवता के लिए खतरा उत्पन्न कर सकता है। इसलिए, आज की शिक्षा में प्राचीन भारतीय योग दर्शन के आदर्शों का व्यावहारिक अनुप्रयोग और भी अधिक महत्वपूर्ण हो गया है। इसका उद्देश्य मनुष्य को शिक्षा के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान प्रदान करना और उसके व्यक्तित्व का विकास करना है। प्राचीन भारतीय योग दर्शन को अपनाने से मानसिक अशांति को दूर किया जा सकता है और व्यक्ति का समग्र विकास संभव है।<sup>4</sup>

ऋषियों ने मंत्र में स्पष्ट रूप से सांख्य और योग दर्शनों का उल्लेख किया है। ऋषि इन दर्शनों का प्रमुख उद्देश्य मुक्ति (मोक्ष) तथा बंधनों से पूर्ण स्वतंत्रता मानते हैं। पतंजलि योगसूत्र में महर्षि पतंजलि ने वर्णन किया है कि योग के माध्यम से पूर्ण मुक्ति या मोक्ष प्राप्त किया जा सकता है। मूल संस्कृत सूत्र में 'दृक्' शब्द का तात्पर्य 'द्रष्टा' के रूप में किया गया है। इसका अर्थ है आत्मा। सूत्र में 'दृश्य' शब्द का भी प्रयोग हुआ है। इसका अर्थ है सूक्ष्म शरीर अथवा मन चित्त। पूर्व में किए गए कर्म आत्मा और सूक्ष्म शरीर के संयोग का कारण बनते हैं। जब तक यह संयोग बना रहता है, तब तक दुःख रहता है। जिस क्षण यह संबंध टूट जाता है, उसी क्षण दुःख का भी अंत हो जाता है और मुक्ति 'मोक्ष' की प्राप्ति होती है। संस्कृत साहित्य में आत्मा और मन के संयोग के कारण भविष्य में भी दुःख बना रहेगा। इस संयोग का कारण अज्ञान ही अविद्या है। संस्कृत सूत्र में 'दृश्य' शब्द का प्रयोग किया गया है। इसका अर्थ केवल मन ('चित्त') या सूक्ष्म शरीर है। जड़ पदार्थों के सभी प्रतिबिंब इसी मन पर पड़ते हैं। संस्कृत सूत्र में तीन विभाग बताए गए हैं- प्रकाश ('प्रकाश'), क्रिया ('क्रिया'), और स्थिति ('स्थिति')। इनके अर्थ क्रमशः 'सत्त्व', 'रज' और 'तम' के गुण हैं। प्रकाशित करना, क्रिया करना, या स्थिर (मौन) हो जाना, यही मन का स्वभाव है। इसके अतिरिक्त, समस्त ब्रह्माण्ड में 'सत्त्व', 'रज' और 'तम' के गुणों से व्याप्त है। इसका कारण यह है कि 'प्रकृति' (प्रकृति) से उत्पन्न प्रत्येक वस्तु इन तीन गुणों ('त्रिगुणात्मक') से बनी हुई है। तत्त्वों ('भूत') के दो प्रकार हैं। स्थूल और सूक्ष्म। पृथ्वी, जीव, अग्नि, वायु और आकाश स्थूल भूत हैं। गंध, रस, रूप, स्पर्श और शब्द पाँच सूक्ष्म तत्त्व ('तन्मात्राएँ') हैं। जब मन इन सूक्ष्म तत्त्वों का बोध करता है, तब वह उन्हीं का स्वरूप धारण कर लेता है। चूँकि ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ पहले से ही मन में विद्यमान हैं, इसलिए सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का स्वरूप एक ही है। अतः जिसे भी व्यक्त 'प्रकृति' या 'प्रधान' कहा जाए, वह सब मन ही है। मन के माध्यम से आत्मा सभी विषयों का अनुभव करती है, और मन के माध्यम से ही आत्मा मुक्ति भी प्राप्त करती है। इस संबंध का कारण अज्ञान है। जब कर्मों के फल समाप्त हो जाते हैं, अथवा मन और आत्मा का संबंध टूट जाता है, तब दोनों अलग हो जाते हैं। यही आत्मा की मुक्ति समझनी चाहिए। जैन मत के अनुसार आत्मा कर्म से बँधी हुई है।<sup>5</sup> यह कर्म केवल आत्मा से चिपका रहता है, अथवा उसका आवरण आत्मा से लगा रहता है। तप के द्वारा आत्मा इस कर्म से मुक्त हो जाती है। यह तप धीरे-धीरे कर्म को धो देता है; इसे 'निर्जरा' कहा जाता है। कर्म को आत्मा से चिपकने से रोकना 'संवर' कहलाता है। बौद्ध मत के अनुसार आत्मा जैसी कोई वस्तु ही नहीं; केवल कर्म ही है। अनेक जन्मों में कर्म के संचय से पाँच स्कन्ध ('पञ्च स्कन्ध') उत्पन्न होते हैं- संज्ञा, वेदना, विज्ञान, संस्कार और रूप। जब यह लक्ष्य प्राप्त हो जाता है, तब 'निर्वाण' के रूप में मुक्ति प्राप्त होती है।

**निष्कर्ष**

दिव्य सविता आपको श्रेष्ठतम कर्मों की ओर प्रेरित करें। सर्वोच्च कर्मों को प्राप्त करने का प्रयास करें। आपको इन्द्र का भाग प्राप्त हो। आपकी संतति समृद्ध हो। आप रोगों से मुक्त रहें। कोई चोर आप पर विजय न पाए। आप पशुओं के स्वामी के संरक्षण में दृढ़ बने रहें। यजमान के पशुधन की रक्षा करें। वेद मूल्यवान हैं, इसलिए उन्हें अत्यंत सावधानी के साथ पीढ़ी-दर-पीढ़ी मौखिक रूप से हस्तांतरित

किया जाता है। वेद मूल संस्कृत भाषा में लिखे गए थे। इस प्रकार, आर्य परिवार, विशेष रूप से ब्राह्मण, शिक्षा के अग्रदूत बने और अपने ज्ञान एवं बुद्धि से समाज के प्रति समर्पित रहे। बाद में यह राजकीय शिक्षा आश्रमों या कुटीर विद्यालयों की शिक्षा प्रणाली के रूप में विकसित हुई। इसे 'शिक्षा' के रूप में जाना जाता है, जो वन क्षेत्रों में स्थित गुरुकुलों के पवित्र शिक्षा केंद्रों की परंपरा है। ये विद्यालय धार्मिक शिक्षाओं के केंद्र हैं। गुरु उन्हें आध्यात्मिक गतिविधियों के माध्यम से शुद्ध ज्ञान प्राप्त करने की शिक्षा देते हैं और उन्हें वेदों का ज्ञान समझाते हैं। उनका संबंध पिता और पुत्र के समान होता है। विद्यार्थी योग के अभ्यास द्वारा ध्यान सीखते हैं। उन्हें योग की अनेक तकनीकों और विधियों की शिक्षा दी जाती है। 'स्वयं को जानना' प्राचीन आश्रम शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है और यही योग का भी उद्देश्य है। युवाओं को आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करने के लिए योग की आवश्यकता होती है। इसलिए, योग धार्मिक शिक्षा का एक साधन बन जाता है और विद्यार्थियों को भक्ति के ज्ञान को बढ़ाने में सहायता करता है। भारतीय दर्शन में योग का अत्यंत महत्व है। आत्म-साक्षात्कार के लिए योग अभ्यास आवश्यक है और इसे सभी धार्मिक परंपराओं द्वारा स्वीकार किया गया है। प्राचीन भारतीय योग दर्शन की भूमिका योग में भाग लेने वाले और भाग न लेने वाले विद्यार्थियों में अवसाद एवं तनाव के स्तरों पर अनेक अध्ययन किए गए हैं, फिर भी संस्कृत साहित्य में योग के ऐतिहासिक अध्ययन और इसके वैज्ञानिक अनुप्रयोगों तथा वर्तमान प्रासंगिकता पर कोई व्यापक शोध नहीं किया गया है। इसे ध्यान में रखते हुए, शोधकर्ता ने इस विषय को अध्ययन के लिए चुना है।

### सन्दर्भ

- [1]. तीर्थ, श्री स्वामी ओमानंद (2003), 'पतंजल योग प्रदीप', गीता प्रेस, गोरखपुर, पृष्ठ 150-151
- [2]. श्रीवास्तव, डॉ. त्रिभुवन (2006), 'प्राकृतिक चिकित्सा', जैन पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 72
- [3]. पं. हरिकृष्णशास्त्री दातार, योग: सिद्धान्त एवं साधना, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2014, पृष्ठ 29
- [4]. प्रो. रामहर्ष सिंह, योग एवं यौगिक चिकित्सा, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, 2014, पृष्ठ 102
- [5]. स्वामी अध्यात्मानंद, योग और स्वास्थ्य, गुर्जर ग्रंथरत्न कार्यालय, अहमदाबाद, 2004, पृष्ठ 181-183